IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

विदेह में तीर्थंकर मल्लिनाथ का अवतरण

जुबी कुमारी
ग्राम – बाघा, वार्ड नं0 –29
पोस्ट – सुर्हीद्व नगर
जिला – बेगूसराय

जैन धर्म के प्रर्वत्तकों अथवा उनके धर्मोपदेशकों को तीर्थंकर कहा गया है। तीर्थंकर तीर्थ उप पद कृ×ा+अप् से बना है, जिसका तात्पर्य है, जो तीर्थ धर्म का प्रचार करें। तीर्थरूप भी तृ + थक् से बना है। यहाँ तीर्थ का तात्पर्य ''तरति पापदिक यस्मात् इति तीर्थम्'' अथवा ''तरति संसार महार्णवं येन तत् तीर्थम्'' अर्थात् जिसके द्वारा संसार महार्णवं अथवा पापादिक वृत्तियों से चार उत्तरा जाये ;मुक्ति मिलेद्ध, वह तीर्थ[1] है। तीर्थंकर शब्द का अर्थ जैन अर्हत अथवा जैनधर्मोपदेष्टा होता है।[2] इस प्रकार जो संसार रूपि सागर से पार उतरने का मार्ग प्रसस्त करता है। वह तीर्थंकर कहलाता है। तीर्थंकर वस्तुतः किसी नवीन सम्प्रदाय या धर्म का प्रवर्त्तन नहीं करते। वे अनादिनिध्न आत्मधर्म का स्वयं साक्षात्कार कर वीतरागभाव से उसकी पुनव्यांख्या या प्रवचन करते हैं। तीर्थंकर को मानव सभ्यता का संस्थापक नेता माना गया है। ये ऐसे श्लाका पुरूष है, जो सामाजिक चेतना का विकास करते हैं और मोक्षमार्ग का प्रवर्त्तन करते हैं।

1. शब्द कल्पद्रुम ऋ प्रका0 मोतीलाल बनारसी दास, उ(ृत झिन्कू यादव

जैन धर्म की ऐतिहासिक रूपरेखा ऋ पृ0 15, प्रका0 इन्डोलॉजिकल बुक हाउस, वाराणसी, 2013 ई0

2. वागन शिवराम आप्टे ऋ संस्कृत हिन्दी कोश ऋ पृ0 431, पूना, 1967 ई0

तीर्थ का अर्थ 'पुल' या 'सेतु' है। कितनी ही बड़ी नदी क्यों न हो, सेतु द्वारा निर्बल से निर्बल व्यक्ति भी उसे सुगमता से पार कर सकता है। तीर्थंकरों ने संसार रूपी सरिता को पार करने के लिए धर्मशासन रूपी सेतु का निर्माण किया है। इसे धर्मशासन के अनुष्ठान द्वारा आध्यात्मिक साधना से जीवन को परम पवित्रा और मुक्त बनाया जा सकता है।

तीर्थं शब्द 'घाट' के अर्थ में भी व्यवहृत है। जो घाट के निर्माता है, वे तीर्थंकर कहलाते हैं। सरिता को पार करने के लिए घाट की सार्वजनिक उपयोगिता है। संसार एक महानदी है, इसमें क्रोध–मान मायादि के विकार रूप मगर–मटस्य मुँह पफाड़े खड़े हुए हैं। इस धर्म का अनुष्ठान और साधना कर प्रत्येक साधक संसार रूपी नदी से पार हो सकता है।

देश–काल के प्रभाव से जब तीर्थं में नाना प्रकार की विकृतियों उत्पन्न हो जाती है, अनेक भ्रांतियों पनपने लगती है और तीर्थ विलुप्त, विश्रृंखलित एवं शिथिल होने लगता है, उस समय एक महापुरूष का उद्भव होता है और वे विशु(रूपेण तीर्थ की स्थापना करते हैं, अतः वे तीर्थंकर कहलाते हैं।[3]

3. महिमा बासल्ल ऋ भगवान महावीर ऋ पृ0 2, प्रका0 कॉलेज बुक डिपो, 83 त्रिापोलिया, जयपुर, 2010 ई0

जैन धर्म दो सम्प्रदायों में आगे चलकर विभाजित हो गया था, एक दिगम्बर तथा दूसरा श्वेताम्बर । दिगम्बर सम्प्रदाय का मानना है कि तीर्थंकर मल्लिनाथ पुरूष थे। इनके अनुसार महिलायें जब तक आगे के जन्म में पुरूष के रूप में उत्पन्न नहीं होती है तो उन्हें निर्वाण की प्राप्ति नहीं हो सकती है।

दिगम्बर सम्प्रदाय के अनुसार[4] इसी जम्बूद्वीप में मेरूपर्वत से पूर्व की ओर कच्छकावती नाम के देश में एक वीतशोक नाम का नगर था। उसमें 'वैशवण' नाम का राजा राज्य करता था। किसी समय वह राजा वर्षो के प्रारंभ में बढ़ती हुई बनावली को देखने के लिए नगर के बाहर गया। वनावली स्थल में उसने एक विशाल वह वृक्ष को शाखाओं और उपशाखाओं को पफैलाकर अपनी विशालता प्रदर्शित करते देखा, उस वृक्ष को देखकर राजा के मन में आया कि यह वृक्ष भी उसके

समान ही अपनी विशालता प्रदर्शित कर रही है। राजा आश्चर्य के साथ इस वृक्ष के संदर्भ में बात करता हुआ वन में आगे बढ़ गया। पिफर अपनी वापसी में उसी मार्ग से आते हुए देखा कि वहीं वट वृक्ष वज्र गिरने के कारण जड़ तक भस्म हो गया है। इसे देखकर राजा विचार करने लगा कि यह जगत क्षनिक और नस्वर है। इस संदर्भ में राजा के मन स्वयं अपनी स्थिति और दयनीयता का भी ज्ञान हुआ।

4. आर्यिका ज्ञानमती ऋ महापुरूष सार ऋ पृ0 114–115, प्रका0 दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान, जम्बूद्वीप, हस्तिनापुर ;मेरठद्ध उ0प्र0 2013 ई0

अतः वापस आकर उसने अपने पुत्रा को राज्य सौंप दिया तथा स्वयं श्रीनाग पर्वत पर विराजमान श्रीनागमुनि के पास जाकर जैन ध्र्म की दीक्षा ग्रहण कर ली। राजा ने अनेक प्रकार तपश्चरण करते हुये। अंगों का अध्ययन किया। सोलह कारण भावनाओं के चिन्तवन से तीर्थंकर प्रकृति का बंध कर लिया तथा अंत में सन्यास विधि से प्राण विर्सजन करके अनुत्तर विमान में अहनिन्द्र पद को प्राप्त कर लिया। अहमिन्द्र की आयु अनुत्तर विमान में छह मास बची तब इन्द्र की आज्ञा से कुबेर ने मिथिला नगरी के इश्वाकुवंशी काश्यपगोत्राीय महाराज कुंभ के आँगन में रत्नवर्षा प्रारंभ कर दी। महाराज कुंभ की रानी का नाम प्रजावती था। चैत्रा शुक्ला प्रतिपदा के दिन सोलह स्वप्न विलोकनपूर्वक रानी प्रजावती ने अहमिन्द्र देव को गर्भ में धरण किया और मत्राशिर सुदी एकादशी के दिन अश्विनी नक्षत्रा में पूर्ण चन्द्र सदृश पुत्रारत्न को जन्म दिया।[5] सौर्ध्म इन्द्र ने समस्त देवों सहित महावैभव के साथ सुमेरू पर्वत पर तीर्थंकर बालक का जन्माभिषेक किया। अनुत्तर 'मल्लिनाथ' नामकरण करके मिथिला नगरी ने जाकर महामहोत्सवपूर्वक माता–पिता को सौंप दिया।

कुमार काल बीत जाने पर एक दिन मल्लिनाथ ने देखा की सम्पूर्ण नगर उनके विवाह के लिए सजाया गया। सर्वत्रा मनोहर वाद्य बज रहे थे। इसे देखते ही उन्हें पूर्ण जन्म के सुन्दर अपराजित विमान का स्मरण आ गया। वे विचार करने लगे कि वीतरागता से उत्पन्न प्रभू की महिमा आपार है तथा दूसरी ओर यह विवाह एक बंध्न लज्जा उत्पन्न करने वाला है। इसी समय लोकांतिक देवों ने उपस्थित होकर उनकी स्तुति की। अनंतत्तर सर्ध्म आदि इन्द्रों ने देवों सहित आकर जर्यत

नामक पालकी पर उन्हें विराजमान कराया और श्वेत वन के उद्यान में ले गये, इस स्थान पर मल्लिनाथ ने मगसिर सुदी एकाद्वशी के दिन अश्विनी नक्षत्रा में सायंकाल के समय सि(साक्षीपूर्वक बेला का नियम लेकर तीन सौ राजाओं के साथ संयम धरण किया एवं अन्त मुहर्त्त में ही मनःपर्ययज्ञान को प्राप्त कर लिया। तीसरे दिन पारणा के लिये आये तब मिथिला नगरी के नंदी सैन राजा ने आहार दान देकर पंचाश्चर्य प्राप्त कर लिया।[6] छद्मस्थ अवस्था में छह दिन व्यतीत हो जाने पर मल्लिनाथ ने बेला का नियम लेकर उसी श्वेतवन में अशोक वृक्ष के नीचे ध्यान लगाया। पौषवदी दूज के दिन अश्विनी नक्षत्रा में प्रातः काल चार धतिया कर्मो का नाथ करके वे केवल ज्ञानी हो गये। उनके समवसरण में विशाख आदि को लेकर 28 गणधर थे। चालीस हजार महामुनि राज, बंधुसेना आदि पचपन हजार आर्थिकाऐं एक लाख सावक और तीन लाख ज्ञाविकाऐं थी। तीर्थंकर मल्लिनाथ इसके बाद बहुत दिनों तक आर्यखण्ड में बिहार करते हुए धर्म प्रचार–प्रसार में लगे रहे।[7]

6. वही ऋ पृ0 115

7. वही ऋ पृ0 115

अंत में एक मास की आयु अवशेष रहने पर तीर्थंकर मल्लिनाथ सम्पदा चल पर पहुँचे वहाँ 5 हजार मुनियों के साथ योग निरोध किया और पफाल्गुन शुल्का पंचमी के दिन भरणी नक्षत्रा में संध्या के समय लोक के अग्रभाग पर विराजमान हो गये।

इसी समय देवों ने आकर उनके निर्वाण कल्याण महोत्सव मनाया।[8]

दिगम्बर सम्प्रदाय के विपरीत जैनियों का श्वेताम्बर सम्प्रदाय मल्लिनाथ का नारी तीर्थंकर मानता है।

पुरूष की तरह स्त्राी को भी केवल ज्ञान और सि(का अध्किारी माना गया है, जिसके अनेक उदाहरण मिलते हैं, राज दामितारि की पुत्राी कनकश्री जिनवर के निकट जैन सि(ान्तों को सुनकर प्रव्रजित हुई कनकश्री उग्र तप के बल पर केवल ज्ञान और सि(प्राप्त कर मोक्ष प्राप्त की।[9]

सि(ान्ततः यह स्वीकृत है कि क्लेश का परिक्षपण करने वाला ही निर्वाण लाभ कर सकता है।[10]

8. वही ऋ पृ0 115

9. श्री रंजन सूरिदेव ऋ वासुदेव हिण्डी ऋ भारतीय जीवन और संस्कृति की बु(कथा ऋ केतुमतीलभ्य, इक्कीसवाँ खंझ, पृ0 327, प्रका0 प्राकृत

जैनशास्त्रा और अहिंसा शोध्–संस्थान, वैशाली, 1973 ई0

10. वही ऋ रक्तवतीलभ्य ऋ पृ0 219

इससे स्पष्ट हो जाता है कि यदि स्त्राी क्लेश–क्षपण की शक्ति से सम्पन्न हो जाती है, तब उसे भी मोक्ष की प्राप्ति हो सकती है। यद्यपि दिगंबर जैन सम्प्रदाय स्त्राी को मोक्ष का अध्किारी नहीं माना है। परन्तु जैन श्वेताम्बर सम्प्रदाय ने स्त्राी को मोक्ष मार्ग का अध्किारी माना गया है। स्त्रिायों अवध्ि ज्ञानी भी हुआ करती थी। यही नहीं वेश्याऐं भी तप कर मोक्ष प्राप्त कर सकती थी। राज्य कन्या सुभति ने 700सौ अन्य कन्याओं के साथ सुव्रता आर्या के निकट सामूहिक दीक्षा ली थी। हलदारी बलदेव और वसुदेव स्वयं सुमति का निष्क्रमाणिभिषेक किया था। सुमति ने भी तपः कर्म अर्जित करके ज्ञान प्राप्त किया था। क्लेश कर्म को नष्ट कर सि(लाभ की।[11]

)षभदेव की पुत्राी ब्राह्मणी प्रथम प्रवात्तिनी अर्थात् भिक्षुणी प्रमुख के पद पर प्रतिष्ठित हुई। गणध्र और प्रवात्तिनियाँ ही तीर्थंकरों के प्रवचनों के व्याख्यता होते थे।

जैन ध्र्म में ध्र्मिक विश्वासमूलक संस्कारों में पूनर्जन्म भी उल्लेखनीय महत्व रखता है। पूर्वभव का आश्रय लेकर ही जैनियों में कथाओं वैचित्रा और विच्छित्ति उत्पन्न की गई है। यही नहीं पूर्वभव की प्राप्ति था। वैर का अनुबंध् परभव में भी अनुसरण करता है। परभव योनिविशेष वैर प्रीति

का क्रमभंज होता हुआ भी दिखाया गया है। इसी संदर्भ में तीर्थंकर मल्लिनाथ की कथा भी हमें उपलब्ध होती है।[12]

11. वही ऋ इक्कीसवाँ केतुमतीलभ्य ऋ पृ0 328

12. वही ऋ केतुयतीलम्भ ऋ पृ0 348

मल्लिनाथ नारी तीर्थंकर थी।[13] इनका जन्म मिथिला में हुआ था। इनकी माँ का नाम प्रभावती और पिता का नाम कुम्भ था। मायाध्म्मकहा[14] ग्रंथ में इनके जीवन की प्रमुख घटनाओं का उल्लेख है। यह अत्यंत सुन्दरी भी उनका पवित्रा वृक्ष अशोक था। इन्द्र और वैधुमती उनके प्रमुख शिष्य थे। सम्भेद शिखर पर उन्होंने निर्वाण प्राप्त की थी।[15] इनका प्रमुख लक्षण कुम्भ तथा रंग नीला है।[16] मल्लिनाथ जैनधर्म की 19वीं तीर्थंकर थी। उनका जन्म 18वीं तीर्थंकर अश्नाथ के निर्वाण के बहुत बाद हुआ था। इनके संबंध में पूर्ण जानकारी हमें आचार्य श्री हस्तिमल जी प्रणित जैन धर्म का मौलिक इतिहास के प्रथम भाग संक्षिप्त संस्करण में उपलब्ध

13. ए0के0 चटर्जी ऋ ए कम्प्रीटेंसिव, हिस्ट्री ऑपफ जैनिज्म ऋ पृ0 7, कलकत्ता 1978 ई0

14. उ(त ऋ झिनकू यादव ऋ जैन धर्म की ऐतिहासिक रूप–रेखा ऋ पृ0 23, पुनःश्च।

15. समवायाग सूत्रा ऋ 25–39, 157, आगमोदय समिति, बम्बई, 1918–20 ई0
स्थानाग सूत्रा ऋ मलयगिरि टीका सहित, 220, 777, बम्बई, 1919 ई0
कल्पसूत्रा ऋ 186, सिवाना, 1968 ई0

16. रूपमण्डन ऋ अध्याय–6, पुनःश्च।

17. आचार्य श्रीहस्तिमल ऋ जैन धर्म का मौलिक इतिहास ऋ संक्षिप्त संस्करण, पृ0 161, प्रका0 सम्यग्ज्ञान प्रचारक मंडल, जयपुर, 2010 ई0